रजिस्ट्री सं. डी. एल.-33004/98 REGD. NO. D. L.-33004/98

भारत का राजपत्र
The Gazette of India

असाधारण
EXTRAORDINARY
भाग III—खण्ड 4
PART III—Section 4
प्राधिकार से प्रकाशित
PUBLISHED BY AUTHORITY

12/2/99

सं० 56] नई दिल्ली, शुक्रवार, नवम्बर 20, 1998/कार्तिक 29, 1920
No. 56] NEW DELHI, FRIDAY, NOVEMBER 20, 1998/KARTIKA 29, 1920

महापत्तन प्रशुल्क प्राधिकरण

अधिसूचना

नई दिल्ली, 20 नवम्बर, 1997

सं. टीएएमपी/5/97-एमबीपीटी/विज्ञापन/असा./III/IV/143/98.—महापत्तन न्यास अधिनियम, 1963 (1963 का 38) की धारा 48 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए महापत्तन प्रशुल्क प्राधिकरण एतद्द्वारा मुम्बई पत्तन न्यास के विरुद्ध इस्पात इंडस्ट्रीज लि. द्वारा दायर मामले में संलग्न अनुसूची के अनुसार एक अंतर्वर्ती आदेश पारित करता है।

एस. सत्यम, अध्यक्ष

महापत्तन प्रशुल्क प्राधिकरण

मामला सं. टी ए एम पी/5/97-एम बी पी टी

इस्पात इंडस्ट्रीज लि. ....आवेदक

बनाम

मुम्बई पत्तन न्यास (एम बी पी टी) ....गैर आवेदक

आदेश

(15 नवम्बर, 1988 को पारित)

यह मामला मुम्बई पत्तन न्यास (एम बी पी टी) द्वारा 'पारगमन कार्गो' पर 15 रुपये प्रति मीट्रिक टन का प्रशुल्क लगाने के विरुद्ध इस्पात इंडस्ट्रीज लि. द्वारा किए गए आवेदन से संबंधित है। एम बी पी टी द्वारा उठाई गई अंतरिम आपत्तियों का निपटान करने के पश्चात् यह मामला गुणावगुण के विचार से तैयार हुआ है।

2. इसी बीच यह सूचित किया गया कि एम बी पी टी ने आवेदक को अपने प्रशुल्क के अनुसार सभी देयताओं का भुगतान करने अथवा एम बी पी टी की समुद्री सीमा में से अपने जलयानों के लिए मार्गाधिकार की मनाही का परिणाम भुगतने के लिए एक अंतिम चेतावनी दी है। इस अंतिम चेतावनी से खिन्न होकर आवेदक ने इस प्राधिकरण से अंतिम चेतावनी के कार्यान्वयन के संबंध में एक अंतर्वर्ती व्यादेश के लिए अनुरोध किया है।

3. एम बी पी टी के विद्वान काउंसल ने तर्क दिया है कि उनकी सभी प्रारंभिक आपत्तियों को इस प्राधिकरण द्वारा दिनांक 27 जुलाई, 1998 के अपने आदेश में स्वीकार कर लिए जाने के कारण इस मामले को आगे चलाए जाने की कोई गुंजाईश नहीं है। इस तर्क से सहमत होना इस सामान्य कारण से कठिन है कि उक्त आदेश में ही इस प्राधिकरण ने आवेदक के संशोधित अभिवचनों के संदर्भ में मामले को आगे चलाए रखने के बारे में उसके दावों को स्वीकार किया है।

4. इस संबंध में विचारार्थ चार मुद्दे उत्पन्न होते हैं :—

(i) क्या इस मामले में अंतर्वर्ती व्यादेश का कोई औचित्य है?

(II) क्या इस प्राधिकरण को ऐसा कोई अंतर्वर्ती व्यादेश जारी करने की शक्ति है ?

(III) क्या अन्य दो सदस्यों की अनुपस्थिति में अकेले अध्यक्ष ऐसा कोई आदेश पारित कर सकता है ?

(IV) क्या इस प्राधिकरण द्वारा इस प्रकार हस्तक्षेप किए जाने के प्रतिकूल कोई आधार अथवा परिस्थिति है ?

5. इन मुद्दों का क्रमवार निम्नप्रकार विश्लेषण किया जा सकता है ।

5.1.1 यह मामला एम बी पी टी द्वारा लगाए गए प्रशुल्क की वैधता और आवश्यकतानुसार कोई उचित प्रशुल्क निर्धारित करने के बारे में है ।

5.1.2 आवेदक ने संदर्भाधीन प्रशुल्क को इस आधार पर चुनौती दी है कि यह कानून की नजर से प्रारंभ में शून्य है अथवा विद्यमान नहीं है । इस मामले के रिकार्ड में उपलब्ध सूचना से मालूम होता है कि संदर्भाधीन प्रशुल्क न तो सरकार द्वारा स्वीकृत किया गया जब कि इसे स्वीकृत किया जा सकता था (अर्थात् फरवरी,1997 में) और न ही इस प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित है जब कि इसे अनुमोदित होना चाहिए था (फरवरी,1998 में) ।

5.1.3 इस परिस्थिति में एम बी पी टी को अपना प्रशुल्क लागू करने और आवेदक से भुगतान वसूल करने की अनुमति देने से उन्हें अपूरणीय घाटा होगा (अथवा किसी भी स्थिति में सरलता से पूरा नहीं होगा) । आवेदक द्वारा सिविल मुकदमेबाजी करने अथवा रिट अधिकारिता का आश्रय लेने से यह नहीं कहा जा सकता कि उसकी आसन्न कठिनाई का संकट कम हो जाएगा । संबंधित प्रशुल्क की प्रत्यक्ष कानूनी अशक्तता की पृष्ठभूमि में विचार करने से इस कठिनाई से सुविधा की तराजू आवेदक के पक्ष में अवश्य झुकेगी । ऐसा होने पर यह मानना होगा कि इस मामले में अन्तर्वर्ती व्यादेश जारी करना उचित होगा ।

5.2.1 इस प्राधिकरण में महापत्तन के प्रशुल्कों को निर्धारित करने की अंतिम शक्तियाँ निहित हैं ।

5.2.2 हम पहले ही यह मान चुके हैं कि प्रशुल्क प्राधिकरण एक अर्द्ध न्यायिक प्राधिकरण है जो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार प्रशुल्क संबंधी मामलों पर निर्णय करेगा । यह आदेश जिसकी इस मामले के दोनों पक्षकारों को जानकारी है, दोनों पक्षकारों द्वारा स्वीकार कर लिया गया है ।

5.2.3 आवेदक ने इस आशय के लिए न्याय निर्णय (ए आई आर,1952 एस सी 12) उद्धृत किया है कि चाहे शक्ति का स्पष्ट प्रावधान केवल " अंतरिम राहत " के लिए है, फिर भी "अंतरिम राहत" प्रदान करने के लिए कार्यक्षेत्र होगा ।

5.2.4.1 आवेदक ने इस आशय का अधिक हाल का न्याय निर्णय (ए आई आर 1969 एस सी 431) उद्धृत किया है कि कोई अर्द्ध न्यायिक प्राधिकरण भी अंतिरम आदेश पारित कर सकता है चाहे उसके लिए कोई विशिष्ट प्रावधान न हो । आवश्यक निहितार्थ पूरा करने के लिए प्राधिकरण को स्पष्ट सांविधिक शक्ति प्रदान किया जाना इस बात के लिए उचित ठहराया गया है कि वह शक्तियों को इस प्रकार प्रदान किए जाने को प्रभावी बनाने के लिए सभी उचित तरीकों का प्रयोग करे ; स्थगन प्रदान करने की शक्ति को इसी संदर्भ में देखा जाएगा क्योंकि इसकी कथित अधिकारिता के प्रति प्रासंगिक अथवा संबद्ध है । संबंधित अर्द्ध न्यायिक प्राधिकरण में ऐसी अंतर्निहित शक्तियों को निहित करने का तर्क निम्न शब्दों में बताया गया है ...." स्थगन दिया जाएगा ...जहां न्याधिकरण इस बात से संतुष्ट है कि अपील के लम्बित रहने के दौरान वसूली प्रक्रियाओं को जारी रखने की अनुमति देने से अपील का समस्त प्रयोजन विफल अथवा व्यर्थ हो जाएगा ।"

5.2.4.2 वर्तमान मामला ए आई आर 1969 एस सी 431 में उद्धृत मामले के सभी धारों के आधार पर कहा जा सकता है । एम बी पी टी के किसी प्रशुल्क के निर्धारण को चुनौती दी गई है । प्रशुल्क, प्रथम दृष्टया कानूनी रूप से अशक्त मालूम होता है । यह वास्तव में न्याय का उपहास होगा यदि इस मामले के लम्बित रहने के दौरान ऐसे किसी प्रशल्क को वसूल करने की अनुमति दे दी जाए ।

5.2.4.3 एम बी पी टी के विद्वान काउंसल ने यह तर्क दिया है कि यह प्राधिकरण केवल भावी प्रभाव से ही दरों में परिवर्तन कर सकता है, इसे मौजूदा प्रशुल्कों की वैधता पर प्रश्न उठाने के लिए पीछे जाने की कोई अधिकारिता नहीं है । इस निष्कर्ष के तर्क का विश्लेषण करना कठिन है । इसके आदेश सामान्यतया भावी प्रभाव से ही लागू होंगे, स्वयं प्राधिकरण द्वारा अपनाया गया रूख है । यह निष्कर्ष इस स्थिति से उत्पन्न नहीं माना जा सकता । परन्तु यह निष्कर्ष निकलना व्यर्थ होगा कि यह प्राधिकरण विद्यमान प्रशुल्क पर बिल्कुल प्रश्न नहीं उठा सकता । यदि ऐसा हुआ तो बिल्कुल भी कोई संशोधन नहीं हो सकता क्योंकि प्रत्येक संशोधन मौजूदा दरों के लिए एक निहित चुनौती और समीक्षा है ।

5.2.4.4 प्रश्नगत आपत्ति की मूर्खता और अधिक स्पष्ट हो जाएगी जब संगणकीय विचारों और कानूनी विचारों के बीच एक अंतर रखा जाएगा । जैसे कि बताया जा चुका है कि संगणकीय विचारों के आधार पर प्रत्येक समीक्षा मौजूदा दरों के लिए एक निहित चुनौती और समीक्षा है । यदि एसा हो सकता है तो यह तर्क कैसे दिया जा सकता है कि उसी प्रयोजन के लिए कानूनी रूप से दावा न किया जाए ।

5.2.4.5 उचित निर्माण के सिद्धांत से भी हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे । हालांकि यदि यह तर्क दिया जाए कि ऐसे मामलों में मूल मुद्दों पर उचित निर्माण का सिद्धात लागू नहीं होगा तो इसका केवल प्रक्रियात्मक हिस्से पर लागू होना ही हमारे लिए उसी निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए पर्याप्त होगा । संविधि (अर्थात महापत्तन न्यास अधिनियम) में इस मुद्दे से संबंधित प्रावधानों में "वसूली योग्य" दर का संदर्भ दिया गया है । इससे पहले की प्रणाली में कोई दर सरकार द्वारा स्वीकृति और राजपत्र में अधिसूचना के पश्चात् वसूली योग्य बनती है । विद्यमान प्रणाली में कोई दर इस प्राधिकरण द्वारा अनुमोदन किए जाने और भारत के राजपत्र में अधिसूचित किए जाने के पश्चात् वसूली योग्य बनती है । प्रतिवादित प्रशुल्क से कोई भी मानदंड पूरा होता मालूम नहीं पड़ता । तब किसी भी प्रयोजनार्थ यह निष्कर्ष कैसे निकाला जा सकता है ? यहाँ यह विनिर्दिष्ट करना संगत होगा कि इसी मुद्दे पर इस प्राधिकरण के इस मामले में दिनांक 27 जुलाई,98 के पहले आदेश पैराग्राफ 7.4 में विचार-विमर्श किया गया था । प्रसंगवश एम बी पी टी ने अब 'पारगमन कार्गो' के लिए प्रशुल्क का प्रस्ताव किया है जो इस समय विचाराधीन है ।

5.3.1 संविधिक प्रावधान स्पष्ट है कि प्राधिकरण के सभी अंतिम आदेश तीनों कार्यरत सदस्यों द्वारा सामूहिक रूप से मिल कर पारित किए जाएगे । परन्तु संविधि अंतर्वर्ती निर्णयों के बारे में चुप है । आवेदक के विद्वान काउंसल ने तर्क दिया है कि इस प्रश्न का उत्तर प्राधिकरण की प्रक्रियाओं को निर्धारित करने के लिए उसे दी गई शक्ति से प्राप्त होगा । इस प्रकार निर्धारित प्रक्रियाओं से अध्यक्ष को सभी प्रक्रियाएं पूरी करनी अपेक्षित हैं और एकत्र समस्त सामग्री के संदर्भ में तथा सामूहिक विचार के आधार पर प्राधिकरण द्वारा केवल अंतिम निर्धारण के लिए मामले लेने अपेक्षित हैं । यह कार्य सभी प्रक्रियाओ में अंशकालिक सदस्यों की सहभागिता की आवश्यकता की अव्यवहारिकता को ध्यान में रखते हुए किया गया है ।

5.3.2 जैसा कि आवेदक के विद्वान काउंसल द्वारा उचित जोर दिया गया है, प्राधिकरण का यह रूख दिनांक 27 जुलाई, 98 के इसके आदेश में स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है जिसे एम बी पी टी द्वारा चुनौती नहीं दी गई है । अत: वे अब इस मुद्दे पर पुन: कार्रवाही करने का अनुरोध नहीं कर सकते ।

5.3.3 ऊपर विनिर्विष्ट कानूनी स्थिति के होते हुए भी यह बताना प्रासंगिक है कि अब जो संवर्भाधीन है वह "अंतिम निर्धारण " नहीं है । प्रश्नगत अंतर्वर्ती व्यादेश के संवर्भ मे कोई "अंतिमता " लक्ष्यार्थ नहीं है । वस्तुत: " निर्धारण " भी अभिधार्थ नहीं है । इसमें जो कुछ भी अंतर्निहित है वह इस मामले के लम्बित रहने के वौरान वसूली प्रक्रियाओं को जारी रखने की अनुमति देकर मामले को विफल अथवा व्यर्थ होने से बचाने के लिए पूर्व स्थिति बनाए रखना है । इस निष्कर्ष के आधार पर और ऊपर विनिर्विष्ट कानूनी स्थिति को ध्यान में रखते हुए अन्य वो सवस्यों की अनुपस्थिति में अकेले अध्यक्ष द्वारा कोई ऐसा आदेश पारित करने में कोई अड़चन मालूम नहीं होती ।

5.4.1 एम बी पी टी की ओर से यह तर्क दिया गया है कि मुम्बई उच्च न्यायालय से राहत के लिए आवेवक की प्रार्थना अस्वीकृत कर वी गई है और उन्हें भुगतान करने का आवेश दिया गया है । इस परिस्थिति में कोई प्रतिकूल आवेश उच्च न्यायालय के (उक्त) आदेश में हस्तक्षेप और अवमाननीय माना जाएगा ।

5.4.2 आवेवक के विद्वान काउंसल ने स्पष्ट किया कि एम बी पी टी के अंतिम निर्णय से उत्पन्न विपत्ति की स्थिति में और अपने व्यावसायिक हितों जिसे अंतिम निर्णय द्वारा बाधित करने का प्रयास किया गया, के तुरंत बचाव के लिए उच्च न्यायालय में जाना पड़ा । उच्च न्यायालय को इस प्राधिकरण के समक्ष लम्बित कार्यवाहियों से संबंधित सभी ब्यौरों से विधिवत् अवगत करा दिया गया था । उनके विद्वान काउंसल की सलाह पर आवेवक ने इस आशय की एक घोषणा की थी कि उच्च न्यायालय ने अत्यधिक स्पष्ट रूप से कहा है कि उसके द्वारा आवेशित भुगतान, प्रशुल्क प्राधिकरण के समक्ष कार्यवाहियों के निष्कर्ष के अध्यधीन होंगे ।

5.4.3 आवेवक के विद्वान काउंसल द्वारा ऊपर विए गए स्पष्टीकरण को ध्यान में रखते हुए और माननीय मुम्बई उच्च न्यायालय का सम्मान करते हुए इस मामले में किसी आवेश के मार्ग में आने वाली कोई कठिनाई मालूम नहीं होती ।

6. जैसा कि पैरा 5.2.4.5 में बताया गया है, एम बी पी टी ने "पारगमन कार्गो " के लिए अब प्रस्ताव किया है जो इस समय विचाराधीन है । आवेवक के मामले में इसके प्रत्यक्ष रूप से अंतर्निहित होने की दृष्टि से इस प्रस्ताव पर इस मामले के साथ कार्यवाही करने का निर्णय लिया गया है । तवनुसार आवेवक को एम बी टी के प्रस्ताव की एक प्रति टिप्पणी के लिए वी जाएगी । तत्पश्चात् वोनों मामलों को गुणागुण के आधार पर विचार करने के लिए उठाया जाएगा ।

7. इस बीच उपर्युक्त कारणोंवश अंतर्वर्ती व्यादेश के लिए आवेदक के अनुरोध पर अनुमति दी जाती है और एम बी पी टी के लिए इस मामले के लम्बित रहने तक अब से पूर्व की स्थिति बनाए रखना अपेक्षित है ।

एस० सत्यम, अध्यक्ष

TARIFF AUTHORITY FOR MAJOR PORTS

NOTIFICATION

New Delhi, the 20th November, 1998

No. TAMP/5/97-MBPT/ADVT/III/IV/EO/143/98.—In exercise of the powers conferred by Section 48 of the Major Port Trusts Act, 1963 (38 of 1963), the Tariff Authority for Major Ports hereby passes an interlocutory order in the case filed by Ispat Industries Limited against the Mumbai Port Trust as in the Schedule appended

S. SATHYAM, Chairman

TARIFF AUTHORITY FOR MAJOR PORTS

Case No.TAMP/5/97-MBPT

Ispat Industries Limited ... **Applicant**

V/s

The Mumbai Port Trust (MOPT) ... **Non-Applicant**

ORDER

(Passed on this 15th day of November, 1998.)

This case relates to an application by Ispat Industries Limited against imposition of a tariff of Rs.15/- pmt on 'transit cargo' by the Mumbai Port Trust (MBPT). After disposal of the interim objections raised by the MBPT, the case has ripened for consideration on merits.

2. In the meanwhile, the MBPT is reported to have given an ultimatum to the Applicant to pay up all dues as per its tariff or face the consequence of denial of passage for its vessels through MBPT waters. Aggrieved by this ultimatum, the Applicant has sought from this Authority an interlocutory injunction on execution of the ultimatum.

3. The learned Counsel for the MBPT has contended that, all their preliminary objections having been upheld by this Authority in its order dated 27 July 98, there is no scope for the case to survive any longer. It is difficult to agree with this

contention for the simple reason that, in the said order itself, this Authority has conceded the claims of the Applicant about further maintainability of the case with reference to his amended pleadings.

4. Four issues arise for consideration in this connection:

(i) Is there any justification for an interlocutory injunction in this case?

(ii) Has this Authority the power to issue such an interlocutory injunction?

(iii) Can the Chairman sitting alone, in the absence of the other two members, pass such an order?

(iv) Is there any ground or circumstance militating against such an intervention by this Authority?

5. These issues can be analysed as follows seriatim.

5.1.1. The case is about the validity of a tariff levied by the MBPT and about determination, if necessary, of a reasonable tariff.

5.1.2. The Applicant has challenged the tariff in reference on the ground that it is ab initio void or non est in the eyes of law. Information available on the case record shows that the tariff in reference was neither sanctioned by the Government when it could have been (i.e., in February 1997) nor approved by this Authority when it should have been (i.e., in February 1998).

5.1.3. To let the MBPT enforce its tariff and recover payments from the Applicant, in the circumstance, will cast an irreparable (or, at any rate, not easily reparable) loss on them. That the Applicant can have recourse to a civil litigation or to the writ jurisdiction can not be said to

alleviate the threat of immediate hardship. Considered in the backdrop of the apparent legal infirmity of the tariff concerned, this hardship does tilt the balance of convenience in favour of the Applicant. That being so, it has to be held, there will be justification for issue of interlocutory injunction in this case.

5.2.1. This Authority is vested with final powers to determine tariffs of major ports.

5.2.2. We have already held that the Tariff Authority is a quasi-judicial authority that will adjudicate on tariff matters in accordance with the principles of natural justice. This order, which is known to the parties to this case, has been accepted by both sides.

5.2.3. The Applicant has cited case law (AIR 1952 SC 12) to the effect that even where the express provision of power is only for 'final relief' there will be jurisdiction for granting 'interim relief'.

5.2.4.1. The Applicant has cited more recent case law (AIR 1969 SC 431) to the effect that a quasi-judicial authority also can pass an interim order even in the absence of a specific provision therefor. An express grant of statutory power has been held to carry with it by necessary implication the authority to use all reasonable means to make such grant effective; the power to grant stay shall be seen in this context as being incidental or ancillary to its stated jurisdiction. The logic of vesting such implied powers with the quasi-judicial authority concerned was stated in the following words: "... the stay will be

granted ... where the tribunal is satisfied that the entire purpose of the appeal will be frustrated or rendered nugatory by allowing the recovery proceedings to continue during the pendency of the appeal."

5.2.4.2. The instant case can be said to be on all fours with the case cited in AIR 1969 SC 431. The prescription of an MBPT tariff is under challenge. The tariff is seen prima facie to suffer from a legal infirmity. It will indeed be a travesty of justice if such a tariff is allowed to be recovered during the pendency of this case.

5.2.4.3. The learned counsel for the MBPT has argued that this Authority can only prospectively alter rates; it has no jurisdiction to go behind existing tariffs to question their validity. It is difficult to comprehend the logic of this contention. That its orders will ordinarily be only prospectively operational is a stand taken by the Authority itself. It is not proposed to resile from this position. But it will be idle to contend that this Authority can not question the existing tariff at all. If that is to be so, then, there can be no revisions at all because, every revision is an implied challenge to and review of existing rates.

5.2.4.4. The vacuity of the objection in question will be even more evident when a distinction is drawn between computational considerations and legal considerations. As already stated, every revision is an implied challenge to and review of existing rates on computational considerations. If that can be so, how can it be argued that legal considerations for the same purpose can not be asserted?

5.2.4.5. The principle of equitable construction will lead us to the same conclusion too. Even if it is argued that, in such cases, the principle of equitable construction will not apply to substantive issues, its mere application to the procedural part will suffice to lead us to the same conclusion. The provisions relevant to this issue in the Statute (viz., Major Port Trusts Act) refer to a "chargeable" rate. In the earlier system, a rate became chargeable after 'sanction' by the Government and notification in the Gazette. In the prevailing system, a rate becomes chargeable after 'approval' by this Authority and notification in the Gazette of India. The impugned tariff does not seem to qualify on either criterion. How then can it be reckoned with for any purpose at all? It is relevant here to specify that this was the point canvassed in paragraph 7.4 of this Authority's earlier order in this case dated 27 July 98. Significantly, the MBPT has now proposed a tariff for 'transit cargo' which is currently under consideration.

5.3.1. The statutory provision is explicit that all final orders of the Authority shall be collectively taken by all the three Members sitting together. But, the statute is silent about interlocutory decisions. The learned Counsel for the Applicant has argued that the answer to this question will flow from the power given to the Authority to prescribe its procedures. The procedures so prescribed require the Chairman to complete all the processes and take up cases only for final determination by the Authority with reference to all the material gathered and on the basis of a collective application of mind. This

has been done bearing in mind the sheer impracticability of requiring part-time Members to participate in all proceedings.

5.3.2. As has rightly been stressed by the learned counsel for the Applicant, this stand of the Authority, explicitly expounded in its order dated 27 July 98, has not been challenged by the MBPT. That being so, they can not seek to reopen the issue now.

5.3.3. Irrespective of the legal position set out above, it is pertinent also to point out that what is in reference now is not any 'final determination'. With reference to the interlocutory injunction in question, there is no 'finality' connotation; in fact, there is not even a 'determination' connotation. What is involved is a mere freezing of the status quo to protect the case from being frustrated or rendered nugatory by allowing the recovery proceedings to continue during the pendency of this case. On this reckoning, and in the light of the legal position set out above, there will appear to be no bar to the Chairman sitting alone, in the absence of the other two members, passing such an order.

5.4.1. It has been argued on behalf of MBPT that the Applicant's prayer for reliefs from the High Court of Bombay have been rejected; and, they have been ordered to pay up. In the circumstance, any order to the contrary shall be construed to be an interference with and contemptuous of the (said) order of the High Court.

5.4.2. The learned Counsel for the Applicant clarified that the approach to the High Court was in the distress situation created by the MBPT ultimatum and to seek immediate protection for their business

interests which were sought to be thwarted by the ultimatum. The High Court was duly apprised of all the relevant details pertaining to the proceedings pending before this Authority. Under the advice of their learned Counsel, the Applicant has given a declaration to the effect that the High Court expressly clarified that the payments ordered by it would be subject to the outcome of the proceedings before the Tariff Authority.

5.4.3. In the light of the clarification given above by the learned Counsel for the Applicant, and with all respect to the Hon'ble High Court of Bombay, there does not appear to be any difficulty coming in the way of any order in this case.

6. As earlier stated in paragraph 5.2.4.5., the MBPT has now proposed a tariff for 'transit cargo' which is currently under consideration. In view of its direct implication for the Applicant's case, it has been decided to process the proposal in conjunction with this case. Accordingly, the Applicant will be given a copy of the MBPT proposal for comments. Thereafter, both the cases can be taken up together for consideration on merits.

7. In the meanwhile, for the reasons give above, the Applicant's request for an interlocutory injunction is allowed; and, the MBPT is required to maintain the position as hithertofore, during the pendency of this case.

S. SATHYAM, Chairman

Printed by the Manager, Govt of India Press, Ring Road, Mayapuri, New Delhi-110064
and Published by the Controller of Publications, Delhi-110054 — 1998